E-ISSN: 2583-9667
Indexed Journal
Peer Reviewed Journal
https://multiresearchjournal.theviews.in

Received: 05-04-2026
Accepted: 12-05-2026
Published: 06-07-2026

INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCE RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY

Volume 4; Issue 3; 2026; Page No. 66-68

आधे-अधूरे नाटक का रंग शिल्प

पूजा देवी

पीएच. डी शोधार्थी हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.22010762

Corresponding Author: पूजा देवी

सारांश

मोहन राकेश स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक के प्रमुख एवं प्रयोगधर्मी नाटककार हैं। उनके नाटक आषाढ़ का एक दिन, लहरों का राजहंस और आधे-अधूरे आधुनिक जीवन की जटिलताओं, मानवीय तनाव, पारिवारिक विघटन तथा स्त्री-पुरुष संबंधों को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करते हैं। प्रस्तुत शोध में आधे-अधूरे के रंगशिल्प का अध्ययन किया गया है। इसमें दृश्य विधान, ध्वनि संकेत, प्रकाश योजना, वेशभूषा, मंच उपकरण, मौन विधान, दृश्य बंध तथा रंगमंचीयता जैसे प्रमुख तत्वों का विश्लेषण किया गया है। मोहन राकेश ने पारंपरिक नाट्य-शिल्प से अलग हटकर सहज भाषा, छोटे संवादों, यथार्थपरक मंच-सज्जा तथा ध्वनि और प्रकाश के सृजनात्मक प्रयोग द्वारा नाटक को अधिक प्रभावशाली और रंगमंचीय बनाया। आधे-अधूरे में महानगरीय जीवन के तनाव, पारिवारिक असंतोष, अकेलेपन और संबंधों की जटिलता को रंगशिल्प के माध्यम से सशक्त अभिव्यक्ति प्राप्त होती है। इस दृष्टि से आधे-अधूरे आधुनिक हिन्दी रंगमंच के विकास में एक महत्वपूर्ण और मील का पत्थर सिद्ध होता है।

मूल शब्दः मोहन राकेश, आधे-अधूरे, रंगशिल्प, हिन्दी नाटक, रंगमंचीयता, दृश्य विधान, ध्वनि संकेत, प्रकाश योजना, वेशभूषा, मंच उपकरण, मौन विधान, आधुनिक नाटक।

प्रस्तावना

मोहन राकेश स्वातंत्र्योत्तर भारत के महत्वपूर्ण नाटककार हैं। 'लहरों का राजहंस', 'अषाढ़ का एक दिन' और 'आधे-अधूरे' उनके द्वारा रचित महत्वपूर्ण नाटक है। मानवीय जीवन का तनाव, पारिवारिक जीवन की समस्या, स्त्री-पुरुष सह सम्बन्ध और आधुनिक जीवन की समस्या उनके नाटकों का मूल तत्व है। किसी भी नाटक का सबसे महत्वपूर्ण तत्व रंग-शिल्प होता है। इसके आधार पर ही नाटक के अन्दर व्याप्त सृजनात्मकता और रचनात्मकता का अध्ययन किया जाता है।

मोहन राकेश का नाटक रंगशिल्प के आधार पर अनुपम और अद्वितीय है। प्रसिद्ध नाट्य निर्देशक बी. बी. कारंत का कथन 'आधे-अधूरे' के विषय में निमनवत है - "हिंदी रंगमंच पर 'आधे-अधूरे' ही शायद हिंदी का एकमात्र नाटक है जो सबसे ज़्यादा खेला गया। पहली बार इसने साहित्यिक और रंगमंचीय नाटक के अंतर को मिटाया है।"

लोकप्रियता के स्तर पर इस नाटक ने सबसे 'पोपुलर नाटक' होने का स्थान हासिल किया है। हिन्दी नाटक के इतिहास में 'आधे-अधूरे' को 'मील का पत्थर' माना जाता है। 'माईल स्टोन' के नाम नाम से प्रसिद्ध यह नाटक रंग-शिल्प के क्षेत्र में सबसे रंगमंचीय है। रंगशिल्प के अन्तरगत नाटक का मूल संवेदानात्मक तत्व समाहित होता है। दृश्य विधान, स्थान-स्थिति, प्रकाश योजना, ध्वनि संकेत, ध्वनिविहीनता, मौन विधान, दृश्य बंध, मंच उपकरण, वेशभूषा भौर रंगमंचीयता इसके मूल अंग होते हैं।

प्रसिद्ध आलोचक नैमिचंद्र जैन का कहना है – "नाटक का सही मुहावरा एक ऐसी भाषा जो एक साथ कई स्तरों पर झंकृत होकर भी बोलचाल स्वाद दे सके, हिन्दी रचना जगत को राकेश की इतनी अनमोल और महत्वपूर्ण देन है जिसको कभी भुलाया नहीं जा का सकेगा"।

कहने का तात्पर्य यह है कि मोहन राकेश ने पहली बार नाटक को जन-साधारण का माध्यम बनाया। प्रयोग की प्रयोगधर्मिता के आधार पर इन्होंने अनेक प्रयोगकर्मी कार्य किए। सही मायनो में राकेश जी ने नाटक को शास्त्रीयता के बंधन से मुक्त किया है। यह बंधन अनेक स्तरों पर उपस्थित था जिसे सरलता से नाटककार ने दर्शकों के लिए बुना है। छोटे - छोटे वाक्यों का निर्माण, सरल - भाषा, सहज भाषा और जन - साधारण की भाषा यहीं उनकी बन पायी है।

'रंगानुभव के बहुरंग' नामक पुस्तक में प्रो. रमेश गौतम का कथन है – "'आधे- अधूरे' अपने कथ्य और शिल्प में बेजोड़ नाटक है। यह नाटक अपने पूर्ववर्ती नाटकों से अलग हटकर जनमानस के बीच एक के नवीन छवि निर्मित करने का कार्य किया है"।

इस प्रकार से यदि कुछ विशेष मुद्दों के आधार पर देखा जाए तो दृश्य विधान के मुख्य आयाम निम्नवत है -

दृश्य विधान:- दृश्य को सुन्दर तरीके से नियोजित की महारत इस नाटककार के अन्दर समाहित था। कुछ सामान्य से सामान्य दृश्य को राकेश जी ने विशिष्ठ रूप से अनोखा बना दिया है। प्रसिद्ध रंगकर्मी जयदेव तनेजा मोहन राकेश को इसी कारण से 'दृश्यों का जादूगर' कहते हैं। दृश्य विधान की पूरी एक श्रृंखला इनके नाटकों में सरलता से उभरकर आयी है। पारिवारिक दृश्यों में तनाव का चित्रण उन्होंने अद्भुत तरीके से किया है। सावित्री और मेहता के बीच के संवाद की शैली और उसकी अदायगी अपने - आपमें अनूठा और दृश्य नियोजन की अनुपम शैली है। पर्दे पर आहिस्ता- आहिस्ता प्रकाश का जलना और मंद होना ध्वनि – संकेतों का एक अनूठा प्रयोग है। यदि मोहन राकेश को लोकप्रिय दृश्य विधान का नियोक्ता कहा जाए तो यह कथन का अतिशयोक्ति नहीं होगी।

ध्वनि संकेत/प्रकाश योजना

ध्वनि संकेत और प्रकाश योजना के आधार पर 'आधे-अधूरे' का निष्पक्ष आलोचना करना काफी कठिन है। रंगमंच पर प्रस्तुतीकरण के समय ध्वनि माध्यमों का संपीडन और विरलन एक नवीन अनुसंधान को अभिव्यक करता है। परिस्थितियों के अनुसार ध्वनि कर मंद और मंदहीन होना, तनाव के वातावरण को रेखांकित करता है।

इसी प्रकार प्रकाशगत योजना में नाटककार ने अनेक आयाम गढ़े हैं। परिस्थितियों की जगमगाहट को दिखाने के लिए प्रकाश का तीव्र होना और परिस्थितियों की धुंधलाहट को दिखाने के लिए प्रकाश का मंद होना मोहन राकेश के नाटकीय पहचान और मानवीय संवेदना की मूल अस्मिता को अभिव्यक्त करता है।

परिस्थितियों का जटिल होना, महानगरीय जीवन का तनाव और उसकी बानगी, एकाकीपन, अजनबियत और पीड़ा की संत्रासगी ये समस्त स्थिति कुछ इस प्रकार की थी जिसे सिर्फ शब्द के माध्यम से नहीं गढ़ा जा सकता था। मोहन राकेश ने इसमें एक अनूठा प्रयोग किया और वह प्रयोग ध्वनि संकेत और- प्रकाश योजना के रूप में उभरकर सामने आया है।

वेशभूषा: साज - सज्जा, वेश-भूषा और पहनावा ओढ़ावा के आधार पर इस नाटक का योगदान अपने समकालीन से नाटक से बिल्कुल अलग है। पुरुष एक से लेकर पुरुष दो, तीन, चार और नाटक की नायिका सावित्री का पहनावा लगातार परिवर्तनशील है। यह परिवर्तन सिर्फ़ बाह्य परिवर्तन नहीं है बल्कि आन्तरिक परिवर्तन भी है। परिवर्तन की यह परिवर्तनीयता नाटककार के रचना कौशल को अभिव्यक्त करता है।

प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री कृष्ण कुमार 'चूड़ी बाजार में लड़की' नामक पुस्तक मे लड़कियों के पहनावे पर गहराई से अपना विचार प्रकट किया है। उनके अनुसार क्या कारण है कि लड़कियों की वेशभूषा पर इतनी सजगता से ध्यान रखा जाता है जबकि लड़को को इस प्रक्रिया में छूट प्राप्त है। इसी मंशा को यदि 'आधे-अधूरे' के धरातल पर जाँचा परखा जाए तो प्रस्तुत नाटक का रंग – संकेत सिर्फ रंगमंचीय प्रस्तुती नहीं है, बल्कि यह नाटक एक प्रकार से समाज में व्याप्त पारिवारिक विभेदीकरण को भी अभिव्यक्त करता है।

सिमोन-द-बुआ का प्रसिद्ध कथन "स्त्री पैदा नहीं होती बल्कि बना दी जाती है"। इस नाटक के उपर भी शब्दस: आरोपित होती है।

दृश्य बंध/मंच उपकरण: दृश्य बंध और मंच उपकरण के आधार पर यदि देखा जाए को लेखक तो मोहन राकेश अपने पूर्ववर्ती नाटककारों से कई मील आगे निकलते नजर आते हैं। नाटक जिस वजह से अब तक जनमानस से दूर थी उसी थीम को लेखक ने पहचाना है और रंगमंचीय बनाने का प्रयास किया है। दृश्य बंध के अन्दर एक बारंबारता छुपी होती है। जिसका लिंक एक श्रृंखला के माध्यम से अभिव्यक्त होता है। एक दृश्य का दूसरे दृश्य से बद्ध होना इसकी सार्थकता को अभिव्यक करता है।

मंच पर भारी-भरकम दृश्य की उपस्थिति के बजाए जन सामान्य वस्तु की उपस्थिति होना अनिवार्य किया गया है। राकेश जी अपने नाटकों में मंच सज्जा मंच पर एक का पूरा ध्यान रखते हैं। मंच पर उपस्थित प्रत्येक वस्तु का अपना एक विशेष प्रतीकात्मक महत्व होता है। उनके नाटकों में मौन की भाषा सिर्फ़ निर्वात को अभिव्यक्त नहीं करता बल्कि उनके नाटकों का मौन अवस्था संबंधी की तक़ाज़ा को भी अभिव्यक्त करता है। यह मौन संवादहीनता नहीं बल्कि संबंधो के बीच की दूरी को निरूपित करता है। प्रसिद्ध नाटककार असगर वजाहत इसी कारण से मोहन राकेश को 'मौन नाटक' का मसीहा कहते हैं।

रंगमंचीयता: नाटक के प्रस्तुतीकरण में सबसे महत्वपूर्ण विषय यह रहा है कि रंगमंच के लिए नाटक लिखा जाए या रंगमंच नाटक के अनुसार खुद को ढाले। देखने वाली बात यह है कि अब तक दोनों के बीच कभी संतुलन बन नहीं पाया है।

'आधे-अधूरे' अपने समय में तथा अपने समय के पार जाकर प्रासंगिक भी इसी कारण से है क्योंकि इसने रंगमंचीय अभिनय की शैली को 'लोकल' बना दिया है।

प्रसिद्ध रंगकर्मी हबीब तनबीर: 'आधे-अधूरे' के रंगमंचीय दृश्य से नहीं बल्कि उसके दृश्य - बोध से प्रभावित है। उनका कथन इस मायने में ज़्यादा महत्वपूर्ण है कि आधे-अधूरे नाम के विपरीत दर्शकों के मानस पटल पर अभिनय शैली, रंग- शैली और मंचन शैली का त्रिगुट कायम करता है।हबीब तनबीर ने स्वतः अपने नाटकों में राकेश के रंगमंचीयता का सार्थक सदुपयोग करते हैं। अभिनय और मंचन की रंगमंचीय शैली जो भारतेन्दु से चलकर हिन्दी में प्रसाद तक पहुंची थी मोहन राकेश ने उसे उत्कर्ष पर पहुंचा दिया। अपने समय के बदलते परिवेश में जहां आम जन का नाटक से मोहभंग हो रहा था। मोहन राकेश ने अपनी क्षमता से इसे पुनः जीवित कर दिया।

निष्कर्ष

अतः निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि मोहन जी ने नाटक के क्षेत्र में एक ऐसा अन्वेषण किया है जो सिर्फ रंग शिल्प के क्षेत्र में हीं नहीं वरन रंग-दृश्य के क्षेत्र में भी अद्वितीय है। स्वातंत्र्योत्तर भारत की बदली हुई परिस्थिति और महानगरीय जीवन के तनाव को अभिव्यक्त करने का सबसे उपयुक्त माध्यम नाटक ही हो सकता था। अतः जनमानस के आकांक्षा के अनुरूप इस साहित्यकार ने जीवन को रचने का प्रयास किया है।

नाटक जिसे अब तक विरल और सघन विधा की कला माना जाता था राकेश जी ने इसे जन-जन तक पहुंचाया है। यह 'आधे-अधूरे' के रंगशिल्प की रचनात्मक ताकत हीं थी कि परिवर्ती नाटककारों ने अपने नाटकों में तत्कालीन समस्या को उठाना शुरू किया और उसे जटिल या बोझिल बनाने के बजाए सहज और सरल बनाया। इसलिए हम कह सकते हैं कि 'आधे-अधूरे' रंगमंच

की वह पाठशाला है जिसमें प्रवेश करके हम रंगशिल्प की विशाल दुनिया को पहचान सकते है और बोधगम्य बन सकते हैं।

संदर्भ

1. आधे-अधूरे - मोहन राकेश
2. रंगानुभव के बहुरंग - रमेश गौतम
3. सातवें दशक के प्रतीकात्मक नाटक - रमेश गौतम
4. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास -डॉक्टर बच्चन सिंह
5. लहरों का राजहंस - मोहन राकेश
6. हिंदी के प्रतीक नाटक - रमेश गौतम
7. अषाढ़ का एक दिन - मोहन राकेश
8. हिन्दी साहित्य और संवेदना कर विकास – रामस्वरूप चतुर्वेदी
9. चूड़ी बाजार में लड़की- प्रो० कृष्ण कुमार
10. भारतनामा - सुनील खिलनानी

Creative Commons (CC) License
This article is an open access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY 4.0) license. This license permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited.